भूमंडलीकरण, युवा जीवन एवं उच्च शिक्षा की चुनौतियाँ

विपिन कुमार शर्मा*

भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने संपूर्ण विश्व में वर्ग विभेद की गति को तीव्र किया है। वर्ग विभाजन अब केवल आर्थिक आधार पर नहीं होता बल्कि सूचनाओं एवं ज्ञान के वितरण पर भी हो रहा है। प्रस्तुत शोध आलेख अपने निष्कर्षों में यह मानता है कि भूमंडलीकरण ने जो निजीकरण की प्रक्रिया को गति दी, उसने शिक्षा को पण्य वस्तु बना दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि शिक्षा पर पूँजीपति वर्ग की इजारेदारी हो गई। सार्वजनिक क्षेत्र में नौकरियों की संख्या में कमी आई। जिससे परंपरागत मानविकी के विषयों पर संकट आ गया। संसाधनों पर उसका नियंत्रण है ऐसे में बहुसंख्यक युवा के हिस्से में भूमंडलीकरण द्वारा उत्पन्न विकास की रोशनाई नहीं आती। उच्च शिक्षा को वर्तमान समय में निजी बनाम सार्वजनिक के द्वंद्व, गुणवत्ता, अनुसंधान के गिरते स्तर आदि चुनौतियों से दो-चार होना पड़ रहा है। ऐसे में शिक्षा के यथास्थिति मॉडल को परिवर्तित करने की आवश्यकता तीव्रता से अनुभव की जा रही है। विश्वविद्यालयों को अधिकतम नव्य विचारों को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना होगा। इसके साथ ही हाशिये पर जी रहे युवाओं को सस्ती तकनीकी शिक्षा उपलब्ध करानी होगी, जिससे वह भी मुख्यधारा में आ सके। सर्वसमावेशी विकास की अवधारणा एवं भूमंडलीकृत न्यायपूर्ण विश्व का स्वप्न वास्तविक अर्थों में तभी चरितार्थ हो सकता है।

भूमंडलीकरण की प्रक्रिया ने जीवन के तमाम क्षेत्रों में क्रांतिकारी परिवर्तन किये हैं। सोच, चिंतन पद्धति, रहन-सहन आदि में भारतीय समाज संक्रमणकाल से गुज़र रहा है। युवा वर्ग

* *असिस्टेंट प्रोफ़ेसर,* फूल सिंह बिष्ट राजकीय महाविद्यालय लंबगांव, टिहरी गढ़वाल, उत्तराखंड

भी उसी समाज का हिस्सा है, ग्रहणशीलता के विषय पर उसकी क्षमता सबसे तीव्र है। कोई भी नई चीज, विचार, जीवन पद्धति युवाओं को ही सबसे पहले अपनी ओर आकर्षित करती है। वर्तमान वैश्वीकृत संचार प्रणालियों ने तो दुनिया को वैश्विक गाँव में तब्दील कर दिया है। यह भी सच है—इस ग्लोबल गाँव में देहात हाशिये पर जा रहे हैं। संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा युवा जीवन पर उदारीकरण के प्रभाव को लेकर की गई शोध की रिपोर्ट कहती है कि 'उदारीकरण' स्पष्ट रूप से युवाओं को अवसर तो उपलब्ध करा रहा है मगर अनिश्चितता और असमानता की स्थिति में भी वृद्धि हुई है। युवा लोग आर्थिक रूप से परिवर्तित इस परिदृश्य में अपने अस्तित्व की तलाश कर रहे हैं। जहाँ विकास और असमानता दोनों ही चरम पर हैं। दुनिया के 200 अमीरों की आय एवं आर्थिक संपदा दुनिया में निवास करने वाले 2 अरब गरीब लोगों के बराबर है और दो वर्गों के बीच की असमानता एवं खाई निरंतर बढ़ती जा रही है। विश्व बैंक के आँकड़े बताते हैं कि विकासशील एवं निर्धन देशों में 1970 से 1998 के बीच निर्यात करने वाली वस्तुओं में 80 प्रतिशित की वृद्धि हुई है मगर प्रति व्यक्ति आय में मात्र पाँच प्रतिशत की ही वृद्धि हो पाई है। निर्धन लोगों की संख्या में कमी नहीं आई।[1]

विश्व बैंक की रिपोर्ट जो आज से लगभग 12 वर्ष पहले के परिदृश्य को हमारे सामने रखती है, लेकिन वर्तमान में उच्च शिक्षा में और बड़ा वर्ग-विभाजन हुआ है। एक साधन संपन्न वर्ग है जिसके पास तमाम संसाधन हैं, पूँजी है वहीं दूसरी ओर बहुसंख्यक आबादी है जिसके लिए उच्च शिक्षा आज भी दूर की कौड़ी है। सरकारी प्रयासों से एवं विकास की योजनाओं ने अंतिम सफ़े पर खड़े व्यक्ति समूहों के पास भी अवसरों की उपलब्धता हुई। हाशिये का युवा मुख्यधारा का हिस्सा बन रहा था, मगर उदारीकरण के पश्चात् शिक्षा में बाज़ार प्रवेश कर गया। निजीकरण के प्रवेश ने शिक्षा को भी पण्य वस्तु बना दिया। वंचित वर्ग के युवा के लिए उच्च शिक्षा में निरंतर स्पेस की कमी होती चली गई। शिक्षा में व्याप्त निजीकरण की प्रवृत्ति ने कई तरह की जटिलताओं को जन्म दिया, जैसे —असंतोष, अवसरों की असमानता आदि। विकास के रास्ते इस बाज़ार समय में खुलते हैं। मगर विकास की यह चमचमाती दुनिया उन्हीं लोगों के लिए है जिनके पास पर्याप्त संसाधन हैं। प्रोफ़ेसर आनंद कुमार शिक्षा के बाज़ारीकरण को लेकर कहते हैं "पिछले 30 सालों में हमने उच्च शिक्षा के लिए खुला बाज़ारीकरण का दु:साहस किया है। इसमें शिक्षा को मोटी कमाई वाली सड़क समझ लिया गया है। एक लाख से लेकर 30 लाख तक के प्रवेश शुल्क के साथ हम अपने बच्चों को देश-विदेश में फैले शिक्षा बाज़ार से डॉक्टर, इंजीनियर, प्रबंधक, कंप्यूटर वैज्ञानिक आदि बनाकर पैसा कमाने वाली मशीनों में बदलने में व्यस्त हो चुके हैं। शिक्षा के बाज़ारीकरण ने चौतरफ़ा पैसा कमाने के लिए खाली वक्त में उलझे लोगों खासकर युवाओं की भीड़ को बढ़ा दिया है। इनके जीवन में मानवीय सरोकार और संवेदनाओं का क्षरण हो रहा है"।[2]

भूमंडलीकृत युग में श्वेतांगी राष्ट्रों की सोच को शिक्षा व्यवस्था में प्रवेश करा दिया। आज भी ग्रामीण युवा, दलित, अल्पसंख्यक, परंपरागत विषयों एवं

Chapter 2.indd 16 5/11/2017 10:44:15 AM

मानविकी में ही अपना भविष्य तलाशता है मगर भूमंडलीकरण, दर्शन, परंपरा, स्मृति, सभ्यता को गैर-ज़रूरी वस्तु मानकर पूँजी की अपरिहार्यता को स्वीकार कर लिया है, ऐसे में प्रबंध एवं तकनीकी संबंधी पाठ्य मानविकी विषयों पर भारी पड़ने लगे हैं। इस परिवर्तन का असर यह हुआ कि एक बड़ा वर्ग अवसरों के मुहाने पर खड़े होकर भी उससे वंचित हो गया। आर्थिक संसाधनों की उपलब्धता ही उच्च शिक्षा पर एक वर्ग का प्रभुत्व स्थापित कर रही है। तेजी से खुलते निजी शिक्षा संस्थान शिक्षा पर निजी बनाम सार्वजनिक की बहस को जन्म दे रहे हैं।

जब आज ज्ञान आधारित अर्थव्यव्यस्था की बात की जा रही है, ऐसे में उच्च शिक्षा में वंचित वर्ग की हिस्सेदारी में वृद्धि होना ज़रूरी है। तभी लोकतांत्रिक प्रणाली में आम-जन का विश्वास पुख्ता हो सकता है। शोध एवं आँकड़े बताते हैं कि ग्रामीण समाज के युवाओं में आज भी परंपरागत विषयों के प्रति रुझान है, परंतु शहरी अभिजात्य वर्ग का युवा तकनीकी एवं प्रबंधन संबंधी अध्ययन करना चाहता है। भूमंडलीकरण ने उसके सपनों को पंख लगा दिए हैं। वैश्विक ब्रांड्स अमरीका एवं ऑस्ट्रेलिया के प्रति आकर्षित अभिजात्य युवा, बहुसंख्यक युवा वर्ग से अलग है। शिक्षा का निजीकरण और अंतर्राष्ट्रीयकरण उसी के लिए है। विदेशों के उच्च शिक्षा संस्थानों में दोयम दर्जे की शिक्षा को भी वह भारत से उत्कृष्ट ही मानता है। मध्यमवर्गीय युवा आज दोराहे पर है। सार्वजनिक सेवाओं के निजीकरण के साथ भी वह सामंजस्य स्थापित नहीं कर पा रहा है। परंपरा एवं ग्लोबल जीवन पद्धति के बीच भी असंतुलन की स्थिति में है। सेंटर फ़ॉर द स्टडी ऑफ़ डवलपिंग सोसाइटीज़ के फ़ैलो संजय सिंह ने युवाओं के रुझानों, रुचियों, चुनौतियों को जानने के लिए लगभग 500 युवाओं से बात की, इस सर्वेक्षण से जो आँकड़े आए, वे युवा मन की आकांक्षाओं और जीवन को समझने के लिए महत्वपूर्ण हैं। आज भी यह सच है कि युवा टीवी देखने, संगीत सुनने, दोस्तों के साथ घूमने में कहीं ज़्यादा वक्त देता है और किताबों को पढ़ने तथा खेलकूद पर कम। 28 फ़ीसदी युवा सुन्दर कपड़े पहनने व सजने संवरने को महत्वपूर्ण मानते हैं। वहीं 32 फ़ीसदी इसे ज़रूरी मानते हैं। दिलचस्प है इसमें लड़कियों की तुलना में लड़के ज़्यादा सक्रिय हैं।

भारतीय युवा चिंताओं और आकांक्षाओं की मिश्रित भावनाओं को भी अभिव्यक्त करते हैं। करीब 50 फ़ीसदी युवा गंभीर चिंता की चपेट में हैं, 23 फ़ीसदी युवा कम चिंता की चपेट में हैं। उनकी तीव्र चिंता रोज़गार की असुरक्षा, दंगे, सामूहिक हिंसा के खतरे, निजी स्वास्थ्य समस्याएँ, पारिवारिक तनाव, सड़क हादसे, आतंकी वारदातों की आशंकाएँ तथा विवाह संबंधी उद्विग्नताओं की वजह से है। लगभग 27 फ़ीसदी युवा बेरोज़गारी को चिंता की सबसे बड़ी वजह बताते हैं, 12 फ़ीसदी युवा जनसंख्या वृद्धि दर को सबसे बड़ी समस्या मानते हैं। वहीं कुछ युवा भ्रष्टाचार, निरक्षरता और आतंकवाद को सबसे बड़ी समस्या के रूप में देखते हैं।[3]

युवा जीवन की जटिलताओं को यह सर्वेक्षण बारीकी से प्रकट करता है। बेरोज़गारी की चिंता इसमें मुख्य रूप से उभरकर सामने आती है, अन्य चिंताओं

में सामाजिक सुरक्षा भी है। अनुभव कहता है दोनों ही मुद्दे शिक्षा अवसरों की समानता एवं कौशलपूर्ण शिक्षा के अभाव की ओर इशारा करते हैं। शहरों और कस्बों में तेजी से खुल रहे निजी शिक्षा संस्थानों से आप डिग्री तो प्राप्त कर सकते हैं लेकिन प्रशिक्षण विहीन होकर रोज़गार नहीं। मोटी फ़ीस के नाम पर ये शिक्षा संस्थान चमक दमक तो पैदा कर सकते हैं, मगर हकीकत यह है कि ऐसे संस्थान गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा नहीं उपलब्ध करवा सकते। इन शिक्षण संस्थानों से निकले छात्रों के पास डिग्री तो होती है मगर अपने क्षेत्र की विशेषज्ञता नहीं। होना तो यह चाहिए कि व्यावहारिक ज्ञान से संपन्न, हुनरमंद गैर डिग्रीधारी लोगों को भी शिक्षण संस्थानों से जोड़ा जाए, जैसे—बढ़ई, इलैक्ट्रीशियन, लुहार आदि जो मूलभूत हुनर से प्रशिक्षुओं को अवगत करा सकें।

व्यवहार एवं सैद्धांतिकी मिलकर युवा विद्यार्थियों को बेहतर इंजीनियर, व्यावसायिक गुण से संपन्न व्यक्तियों में रूपांतरित कर सकेगी।

अपने एक आलेख में भारत के पूर्व चुनाव आयुक्त, एस वाई कुरैशी ने युवा वर्ग की स्थितियों, चुनौतियों को लेकर कहा था " जहाँ प्रश्न अर्धशिक्षित और शिक्षित युवाओं का है—मेरी समझ में प्राय: सारी चुनौतियाँ हमारी शिक्षा व्यवस्था की वजह से हैं और इसमें उपलब्ध कराया जा रहा पाठ्यक्रम इस समस्या की जड़ है। अभी पाठ्यक्रम में हाईस्कूल यहाँ तक कि सैकेंडरी लेवल तक जो पढ़ाया जाता है उसके ज़्यादातर हिस्से का आधुनिक व्यवस्था में हमारे व्यावहारिक ज्ञान से कोई ताल्लुक नहीं दिखता है, इसलिए कि यह शिक्षा शिक्षार्थी की दिशा निर्धारित नहीं कर पाती। हमारे पाठ्यक्रमों में हाईस्कूल तक की गणित की अनिवार्यता का क्या मतलब है। युवा यानि 'मनुष्य के निर्माण की अवस्था' में ही उसकी क्षमता और अभिरुचि से संबंधित ज्ञान देने की व्यवस्था होनी चाहिए"।[4]

वर्तमान समय में युवावस्था तमाम तरह की चुनौतियों का सामना कर रही है, एस. वाई. कुरैशी द्वारा की गई टिप्पणी न केवल माध्यमिक शिक्षा प्रणाली पर लागू होती है। शिक्षा व्यवस्था में सुधार की मंशा से सरकार द्वारा समय-समय पर विशेषज्ञों की समितियाँ गठित की जाती हैं। 1993 में प्रख्यात शिक्षा वैज्ञानिक प्रोफ़ेसर यशपाल के नेतृत्व में समिति ने अपनी अनुशंसाओं में कहा था कि शिक्षा को व्यावहारिक पहलुओं से जोड़ने की आवश्यकता है। महाविद्यालयों, विश्वविद्यालयों में अवस्थापनात्मक ढाँचे को बढ़ाने का सुझाव भी उन्होंने दिया था— विशेषतया लैब एवं परीक्षण शालाएँ। प्रोफ़ेसर यशपाल की इस बात को लेकर भी शिकायत थी कि विद्यार्थियों, अध्येताओं का मूल्यांकन परीक्षणकर्ता उनकी क्षमताओं के आधार पर न करके जान पहचान के आधार पर करते हैं। उनका आग्रह इस बात को लेकर भी था—अध्येताओं का किसानों, शिल्पकारों से सीधे संपर्क कराया जाए। जिससे वह संवाद एवं व्यावहारिक क्रियाओं द्वारा सीख सकें, जैसे किसान से फसल चक्र, फसलों के लिए जल स्थितियाँ, मिट्टी की स्थिति, जैवकीय उर्वरकों के प्रयोग आदि चीजें वह किसानों से सीख सकते हैं, शिल्पकारों से उनकी वंशानुगत कारीगरी से उत्पन्न विशेषज्ञता का लाभ उठाया जा सकता है। मातृभाषा में ज्ञान को समझने

एवं आत्मसात् करने पर भी उनका आग्रह था। मगर कुछ समय ही देशभर में इन अनुशंसाओं पर चर्चा हुई कुछ परिवर्तन भी हुए। लेकिन नीति नियंताओं के यथास्थितिवादी विचारों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। आज भी ग्राणीण भारत का युवा अधिकतर अवसरों से इसलिए वंचित रह जाता है क्योंकि अंग्रेज़ी भाषा में उसकी पकड़ नहीं होती। समझ, ज्ञान, बुद्धिमता में वह कमतर न होने पर भी अंग्रेज़ीदा अभिजात्य वर्ग से संबंद्ध युवा वर्ग के सामने ग्रामीण युवा हाशिये पर आ जाता है। विशेषज्ञों का मानना है संवाद कौशल का अभाव, विश्लेषण दक्षता का ना होना और समस्या के समाधान में अयोग्यता, संबंधित क्षेत्र की अज्ञानता जैसे तत्व ग्रामीण एवं दुर्गम क्षेत्र में निवास करने वाले युवाओं की सबसे बड़ी चुनौतियाँ हैं। चंद्रशेखर प्राण (नेहरू युवा केंद्र संगठन से संबद्ध) का मानना है ‘समाजशास्त्रियों से लेकर राजनेता तक यह स्वीकार करते हैं कि इस देश में भारत और इंडिया दो देश हैं’। यह सच्चाई गाँव और शहर के बीच बढ़ती हुई विषमता को इंगित करती है और इसका प्रभाव सबसे अधिक युवाजनों के हिस्से में है। आज का शहरी युवा जहाँ न्यू इंटरनेट जनरेशन के रूप में जाना जाता है वहीं ग्रामीण क्षेत्र के युवाओं को अपनी जड़ों से कटे हुए बेकार (जॉबलैस) युवा के रूप में पहचाना जाता है ।[5]

यह वर्ग विभेद स्त्री युवा वर्ग में और भी ज़्यादा है। पुरुष युवाओं को जहाँ आगे बढ़ने की आज़ादी है भी लेकिन बालिकाओं के हिस्से में तो यथास्थितिवाद एवं रूढ़िवादिता ही आती है। यह भी नहीं है कि कुछ परिवर्तन नहीं हुआ, उदारीकरण ने आर्थिक स्थिति के स्तर पर तो दुनिया को आपस में जोड़ा, शुल्क-प्रशुल्कों में भी कमी आई, मगर विचारों का उदारीकरण, विश्वबंधुत्व की भावना, समता का विचार नहीं आ पाया। जैसे अश्वेत एवं श्वेतांगी राष्ट्रों के बीच वैषम्य है ऐसा ही वैषम्य भारत में जाति-धर्म, अमीर-गरीब के बीच बना हुआ है।

सरकार की तमाम लोक कल्याणकारी योजनाओं के पिछली अर्द्धशती से भी ज़्यादा समय से संचालित होने के बावजूद यह विषमता उच्च शिक्षा ले रहे युवाओं में भी दिखाई देती है। एक वर्ग शिक्षा के लिए विदेश भेजने में अपने बच्चों के लिए करोड़ों रुपये खर्च कर रहा है। जनसत्ता में प्रकाशित एक लेख बताता है “ इस साल जुलाई में अभिभावकों ने विदेश में पढ़ रहे अपने बच्चों को मेंटेनेंस के नाम पर 11.36 करोड़ डॉलर विदेश भेजे जो कि एक रिकॉर्ड है।

एसोचेम की रिपोर्ट ‘रीअलाइनिंग स्किलिंग टुवर्ड्स मेक इन इंडिया’ बताती है भारतीय अभिभावकों में विदेश में शिक्षण के प्रति इतनी लालसा है कि वह साल में छह से सात अरब डॉलर की भारी भरकम राशि खर्च करते हैं। सिर्फ नेता और अभिनेता ही नहीं देश का विशाल वर्ग भी कर्ज़ा लेकर ऐसा करने में पीछे नहीं है।

विदेशों में शिक्षा में होने वाले खर्च भारत में खर्च पर 2013 में अंतर्राष्ट्रीय बैंक (एच.एस.बी.सी.) द्वारा किए गए सर्वेक्षण ‘द वैल्यू ऑफ़ एजुकेशन—स्प्रिंग बोर्ड फ़ॉर एक्सेस के अनुसार ग्रेजुएट कोर्स के लिए भारत में बाहर से पढ़ने आए छात्रों का औसत खर्च रहन-सहन में 5643 डॉलर है, जिसमें महज़ 581 डॉलर फ़ीस के रूप में किए जाते हैं”।[6]

यह एक बड़ा विभेद है जो संपन्न युवा एवं हाशिये पर जा रहे युवाओं की उच्च शिक्षा पर होने वाले खर्च में पाई जाने वाली असमानता को अभिव्यक्त करते हैं। शिक्षा में बाज़ारीकरण का दबाव है चमचमाती बिल्डिंग, लकदक व्यवस्था मगर फ़ैकल्टी एवं अनुसंधान के नाम पर शून्य। ग्रामीण एवं दुर्गम क्षेत्र में रहने वाला युवा आज भी सरकारी संस्थानों की ओर जाता है, वहीं शहरी संपन्न वर्ग निजी एवं विदेशी शिक्षण संस्थानों की ओर रुख करता है। बेशक उनमें से अधिकतर शिक्षण संस्थान दोयम स्तर के हों। बाज़ारवाद एवं निजीकरण ने शिक्षा को व्यवसाय में तब्दील कर दिया है। यदि इस प्रक्रिया से शोध एवं पठन-पाठन में सुधार आता है तो यह प्रक्रिया भी स्वागत योग्य होती। मगर स्थितियाँ यथावत हैं। प्रख्यात शिक्षाशास्त्री प्रणय कृष्ण का मानना है कि शिक्षा पर कुछ अभिजात्य वर्ग एवं पूँजीपतियों का अधिपत्य स्थापित हो रहा है। "भूमंडलीकरण पूँजी और मुक्त बाज़ार की चाकरी ने पूरी शिक्षा व्यवस्था को जोत देने की तैयारी पूरी की है। इसके लिए तर्क सब वही हैं कि नवउदारवादी व्यवस्था के पैरोकार सदैव ही देते आए हैं, यानि शिक्षा में निवेश की ज़रूरत के मुताबिक सरकार के पास पर्याप्त संसाधन नहीं हैं। शिक्षा में निजी पूँजी और विदेशी निवेश से प्रतियोगिता बढ़ेगी जिससे गुणवत्ता में सुधार होगा और चुनने के लिए विकल्प ज़्यादा होंगे आदि। बड़ी पूँजी जैसे-जैसे शिक्षा पर अपना प्रभुत्व कायम करती चली जाएगी, जीवन मूल्यों सामाजिक विस्तार, आलोचनात्मक चेतना हर दृष्टि से से शिक्षा का क्षेत्र संकुचित होगा"।[7]

उदारीकरण ने शिक्षा को नुकसान ही पहुँचाया है, ऐसा भी नहीं कहा जा सकता। सूचना आधारित संचारक प्रणालियों ने ज्ञान को देश काल की सीमाओं से स्वतंत्र भी किया। इंटरनेट ने तथ्य परक ज्ञान के विस्तार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। शिक्षण की परंपरागत प्रविधियों पर अब सवाल खड़े होने लगे हैं, इसी वजह से कुछ परिवर्तन की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता।

वर्तमान समय में युवा देश-दुनिया के बीच आवाजाही करना चाहता है। शिक्षा में भी वंचितों के बीच से समता का स्वर उभर रहा है, चेतना आने पर उच्च शिक्षा के प्रति युवाओं में ललक उत्पन्न होगी। यदि हम विकसित राष्ट्र बनाना चाहते हैं तो हमें मानव संसाधन को कौशल संपन्न बनाना होगा। अपने विश्वविद्यालयों को अधिक से अधिक आज़ाद एवं अद्यतन रखना होगा। वरिष्ठ पत्रकार गोविंद सिंह पंजाब विश्वविद्यालय की शैक्षिक एवं अनुसंधान उत्कृष्टता संबंधी विवरण का विश्लेषण करते हुए उच्च शिक्षा को लेकर मूलभूत मुद्दे उठाते हैं। "अंतर्राष्ट्रीय स्तर आकलन के कुछ मानदंड हैं, जिनके बिना आप उस दौड़ में कहीं नहीं ठहरते"। अधिकांश भारतीय विश्वविद्यालयों के लिए उन्हें छू पाना भी संभव नहीं है। इनमें प्रमुख हैं छात्र शिक्षक अनुपात, कितने नोबल विजेता विद्वान विश्वविद्यालय ने उत्पन्न किए हैं। अनुसंधान का स्तर और परिमाण, अंतर्राष्ट्रीय फ़ैकल्टी, अंतर्राष्ट्रीय छात्र, कितने पुरस्कार छात्रों और अध्यापकों को मिले हैं, अनुसंधान और नवपरिवर्तन में निवेश, पढ़ाई का स्तर, नियोक्ता की नज़र में प्रतिष्ठा, उद्योग जगत

से होने वाली आय अर्थात् विश्वविद्यालय किस सीमा तक उद्योग जगत से जुड़ा है कितने और कैसे अंतर्राष्ट्रीय आदान-प्रदान होते हैं और कुल मिलाकर विश्वविद्यालय की प्रतिष्ठा कैसी है।

ये कुछ मानदंड हैं जिनमें भारतीय विश्वविद्यालय काफी पीछे हैं। तीसरी दुनिया में हम चीन, ताइवान से काफी पीछे हैं। दुनिया के पहले दूसरे स्थान पर रहने वाले हार्वर्ड विश्वविद्यालय का बजट जहाँ 22,500 करोड़ है वहीं हमारे श्रेष्ठ संस्थानों का बजट 500–600 करोड़ है, ऐसे में आप अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर मुकाबले की सोच भी कैसे सकते हैं।"[8]

गोविंद सिंह भारतीय विश्वविद्यालयों एवं उच्च शिक्षा की यथार्थ स्थिति से हमारा परिचय कराते हैं। दुनिया में जहाँ उच्च शिक्षा में क्रांतिकारी परिवर्तन हो रहे हैं वहीं हम यथास्थितिवाद के शिकार हैं, चुनौतियों का सामना करने के लिए निजीकरण का सहारा लेने लगते हैं। हवाई विश्वविद्यालयों ने वैश्वीकरण एवं उच्च शिक्षा की चुनौतियों को लेकर संगोष्ठी करवाई, पुस्तक रूप में इस गोष्ठी का सार भी छपा जिसमें कुछ तथ्य निकलकर सामने आए। वैश्वीकरण ने जहाँ सुविधाएँ उपलब्ध कराई हैं वहीं चुनौतियाँ भी उत्पन्न की हैं। जहाँ कंप्यूटरों के अंतर संजाल पर ज्ञान का भंडार है वहीं समस्याएँ भी हैं। इन समस्याओं का बहुलता एवं अंतरअनुशासनात्मक नज़रिए से ही समाधान किया जा सकता है ।[9]

2003 में उदारीकरण एवं उच्च शिक्षा को लेकर हुई संगोष्ठी की प्रकाशित पुस्तक में यह बात सामने आई कि उच्च शिक्षा में शीघ्र ही तीव्र गति से निजीकरण होगा व सार्वजनिक शिक्षा संस्थान दबाव में होंगे और आज 2015–16 में भी यही हो रहा है। पिछले दिनों क्लेयर केन मिलर का उच्च शिक्षा को लेकर लेख पढ़ा जिसका सारांश यह था कि अब युवा वर्ग परंपरागत ज्ञान-प्रणालियों से इतर ज्ञान ग्रहण करने को उत्सुक है। ज्ञान तो वह इंटरनेट से ही ले लेता है अथवा ले रहा है। अब वह यात्राओं के माध्यम से बहुसांस्कृतिक एवं बहुलतावादी समाज के बीच रहकर व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त करना चाहता है। वह मिनर्वा स्कूल का उदाहरण देती हैं। 'मिनर्वा स्कूल में जहाँ यात्राओं के माध्यम से विद्यार्थियों को अपनी पढ़ाई करने एवं समस्याओं से जूझने के लिए प्रेरित किया जाता है, हर सेमेस्टर में उन्हें देश बदलना पड़ता है, जैसे— जर्मनी, यूनान, भारत, ऑस्ट्रेलिया, दक्षिणी कोरिया, तुर्की, इंग्लैंड। मिनर्वा स्कूल के डीन कहते हैं " हम विद्यार्थियों को उन नौकरियों के लिए तैयार कर रहे हैं जो अभी अस्तित्व में नहीं हैं। इसके लिए हम उन्हें ज्ञान दे रहे हैं"।[10]

एक व्यापक परिकल्पना एवं भविष्योन्मुखी सोच के साथ शिक्षा संबंधी नीतियाँ बनाने की आवश्यकता है। सैम पित्रोदा, नारायण मूर्ति, अज़ीम प्रेमजी सभी का इस बात को लेकर आग्रह है कि उदारीकरण (भूमंडलीकरण) के पश्चात् दुनिया में काफी कुछ परिवर्तित हुआ है, हमारी शिक्षा पद्धति को भी बदलना होगा। केंद्र से ज़्यादा हाशिये की चिंता करनी होगी। दुर्गम क्षेत्रों में संघर्ष कर रहे युवाओं को तकनीकी ज्ञान एवं कौशल की आवश्यकता है। उत्तराखंड राज्य के टिहरी गढ़वाल के प्रतापनगर क्षेत्र में रहते हुए यह महसूस किया कि अभी हमें

शिक्षा के क्षेत्र में निवेश एवं ईमानदारी पूर्ण प्रयासों की आवश्यकता है, ज़रूरत है हम उच्च शिक्षा में रोज़गार एवं निवेश की भावना को आगे तक लेकर जाएँ। नागरिक समूहों की भी इसमें बड़ी भूमिका है।

टिप्पणी

[1] संयुक्त राष्ट्र संघ की रिपोर्ट. 2003. 'यंग पीपुल इन ए ग्लोबलाइज़िंग वर्ल्ड'. *यूथ वर्ल्ड रिपोर्ट.* पृ. 29.

[2] कुमार, आनंद. 31 दिसंबर 2011. 'समावेशी बनाइए शिक्षा'. *राष्ट्रीय सहारा, हस्तक्षेप.* पृ. 6.

[3] कुमार, संजय. 2011. 'भारत के युवा परिवर्तन व निरंतरता की समवेत चेतना के वाहक हैं'. *राष्ट्रीय सहारा, हस्तक्षेप.* नोएडा, 8 जनवरी 2011.

[4] कुरैशी, एस. वाई. 8 जनवरी 2011. 'व्यवस्था को भी हो, युवावस्था की समझ'. *राष्ट्रीय सहारा, हस्तक्षेप* परिशिष्ट. नोएडा. पृ. 3.

[5] प्राण, चन्द्रशेखर. 8 जनवरी 2011. 'युवाओं का वर्तमान और भविष्य'. *राष्ट्रीय सहारा, हस्तक्षेप,* परिशिष्ट. नोएडा. पृ. 3.

[6] कुमार, अभिषेक. 10 नवंबर 2015. 'शिक्षा में कब होगा मेक इन इंडिया'. *जनसत्ता.* पृ. 06. नयी दिल्ली.

[7] कृष्ण, प्रणय. 14 अगस्त 2010. 'कुलीनता और पूँजी का लगातार कसता शिकंजा'. *राष्ट्रीय सहारा, हस्तक्षेप.* पृ. 4.

[8] सिंह, गोविंद. 11 दिसंबर 2013. पंजाब 'विश्वविद्यालय कैसे बना अव्वल (शिक्षा व्यवस्था)'. *अमर उजाला.* देहरादून.

[9] ओडेन, जे.के. एवं पीटर टी. मैनेकस. 2004. *'ग्लोबलाइज़ेशन एंड हायर एजुकेशन'.* यूनिवर्सिटी ऑफ़ हवाई प्रेस (पुस्तक के परिचय) से अवधारणा एवं स्थितियाँ उद्धृत की गई हैं.

[10] मिलर, क्लेयर केन. 4 नवंबर 2015. 'असल मकसद ढूँढ़ती शिक्षा'. *अमर उजाला*, अग्रलेख. नयी दिल्ली.